Dr. Nutisri Dubey
Assistant Professor
Dept. of Philosophy
H. D. Jain College, Ara

U.G. Sem IV

MJC – 05 : Western Philosophy
(Descartes – 'Mind and Body')

डेकार्ट - 'मन एवं शरीर'

डेकार्ट का दर्शन द्वैतवादी है क्योंकि यह आत्मा एवं अनात्मा दोनों को परस्पर विरोधी स्वरूप और गुणों से युक्त मानता है। आत्मा चैतन्य से युक्त है। इसके विपरीत शरीर एक भौतिक तत्व है जिसमें केवल विस्तार पाया जाता है। डेकार्ट आत्मा को चेतन द्रव्य और शरीर को जड़ द्रव्य मानता है जो परस्पर विरोधी गुणों से युक्त है। आत्मा केवल चिंतनशील है उसमें लेशमात्र भी विस्तार नहीं है और शरीर विस्तारवान है उसमें चिंतन का नितान्त अभाव है। डेकार्ट के अनुसार मनुष्य न केवल मन है और न केवल शरीर है। वह आत्मा (मन) और शरीर अर्थात् विचार और विस्तार दोनों का संयुक्त रूप है) प्रश्न उठता है कि

दो परस्पर विरोधी गुणों वाले द्रव्य (आत्मा और शरीर) परस्पर कैसे संबंधित हो सकते हैं? यही डेकार्ट के द्वैतवाद की मूलभूत समस्या है।

आत्मा और शरीर में संबंध स्थापित करने के लिए डेकार्ट ने अंतर्क्रियावाद या क्रिया प्रतिक्रियावाद (Interactionism) का प्रतिपादन किया है। इस सिद्धान्त के अनुसार आत्मा और शरीर एक-दूसरे के प्रति क्रिया-प्रतिक्रिया करते हैं। एक तत्व की क्रिया से दूसरे तत्व में प्रतिक्रिया होती है और इस प्रकार वे एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। किंतु प्रश्न उठता है चेतन और अचेतन तत्व एक दूसरे को क्यों प्रभावित करते हैं? यदि वे एक-दूसरे से क्रिया-प्रतिक्रिया करते हैं तो उन्हें परस्पर स्वतन्त्र कैसे कहा जा सकता है? इन प्रश्नों का डेकार्ट के दर्शन में कोई संतोषजनक उत्तर नहीं मिलता है। डेकार्ट ने आत्मा और शरीर के बीच संबंध की व्याख्या 'पीनियल ग्लैण्ड' (Pineal Gland) के माध्यम से की है। पीनियल ग्लैण्ड शारीरिक है क्योंकि यह मस्तिष्क का सूक्ष्मतम मध्य भाग है। डेकार्ट ने इसे आत्मा का आसन

कहा है । यद्यपि आत्मा सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त होता है तथापि उसका प्रमुख स्थान पीनियल ग्लैण्ड है । शारीरिक परिवर्तनों के कारण पीनियल ग्लैण्ड भी गतिशील हो जाता है जिसके कारण वहाँ पर स्थित आत्मा भी हिल जाता है। इसके परिणाम स्वरूप आत्मा संवेदनाओं और भावनाओं का अनुभव करने लगता है। इसी प्रकार ऐच्छिक कार्यों, संकल्पों, भावनाओं, इच्छाओं आदि के अवसर पर आत्मा के क्रियाशील (चिंतनशील) होने पर पीनियल ग्लैण्ड भी गतिशील हो जाती है। इसके फलस्वरूप सम्पूर्ण शरीर में गति पैदा हो जाती है। इस प्रकार आत्मा और शरीर क्रिया—प्रतिक्रिया के द्वारा एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं।

डेकार्ट का यह अन्तर्क्रियावाद दर्शन जगत में कटु आलोचना का विषय रहा है। डेकार्ट ने आत्मा (मन) और शरीर के मध्य संबंध को स्पष्ट करने के लिए जो समाधान प्रस्तुत किया है वह तार्किक दृष्टि से आपत्तिजनक है। यदि आत्मा और शरीर का यह तथाकथित मिलनकेन्द्र (पीनियल ग्लैण्ड) शारीरिक है तो उसे विस्तारयुक्त कहा जायगा। यदि पीनियल ग्लैण्ड विस्तारवान है तो विस्तार से रहित

आत्मा का मिलन - केन्द्र कैसे हो सकता है? और यदि मन और शरीर परस्पर भिन्न स्वभाव वाले हैं तो इनमें अन्तर्क्रिया (संबंध) कैसे हो सकती है? यही समस्या भारतीय दर्शन में सांख्य के द्वारा प्रतिपादित पुरुष एवं प्रकृति के संबंध को लेकर है। अद्वैत वेदान्तियों ने परस्पर विरोधी गुणों वाली दो स्वतंत्र सत्ताओं में किसी प्रकार के संबंध को तर्कत: असंतोषप्रद कहा है।

द्वैतवाद के विरुद्ध उठाए गये समस्त आक्षेप डेकार्ट पर भी लागू होते हैं। सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त चेतन तत्व को शरीर के एक भाग विशेष तक सीमित करना एवं मस्तिष्क के इस अंश को आत्मा व शरीर का मिलन-केंद्र कहना, डेकार्ट के मन की कल्पना मात्र है। वस्तुत: अन्तर्क्रियावाद आत्मा को दैशिक बना देता है जो असंभव है। यदि आत्मा और शरीर एक-दूसरे से भिन्न और परस्पर विरोधी द्रव्य हैं, तो दोनों के पारस्परिक संबंधों का तार्किक विवेचन नहीं किया जा सकता है।

राइल ने आत्मा और शरीर अथवा चेतन और जड़तत्व के इस द्वैत का खंडन किया है। उसने डेकार्ट के द्वैतवाद की आलोचना करते हुए व्यंगात्मक शैली में इसे 'मशीन' (शरीर) में प्रेत (आत्मा) का पूर्वाग्रह' कहा है। राइल इसे एक 'अधिकृत सिद्धान्त' कहता है जो अनेक प्रकार की भ्रान्तियों का जनक है। चेतन और जड़तत्व दोनों को पृथक्-पृथक् प्रकार की सत्ता मानने में एक विशेष प्रकार की भूल हुई है। राइल ने इसे कोटि भ्रम' (Category-Mistake) कहा है। इस भ्रम का कारण यह है कि मानसिक जीवन के तथ्यों को एक वर्ग के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है, जबकि वे किसी अन्य कोटि के अन्तर्गत आते हैं। राइल यह प्रश्न करता है कि मशीन (शरीर) के अंदर बन्द प्रेत (आत्मा) मशीन के बाहर की दुनिया को कैसे जान सकता है? इस प्रश्न का तर्कसंगत उत्तर देना डेकार्ट के लिए असंभव है। इस प्रकार डेकार्ट आत्मा (मन) और शरीर के परस्पर संबंध की संतोष-जनक व्याख्या नहीं कर पाते हैं।